अखरावती

कबीर साहेब का पूरा ग्रन्थ

जो

लाला गिरधारी लाल साहेब के २६ चौपाई वाले पहिले छापे में १७ चौपाई और एक हस्त लिखित प्रमाणिक लेख से

[जिसे कृपा करके नदियाद के एक कबीरपंथी भक्त वैद्यराज नारायण भाई पंड्या ने भेजा] यथा स्थान जोड़ कर व शोध कर छापी गई।

मुद्रक व प्रकाशक

बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स,

इलाहाबाद

[छठवां एडिशन] सन् १९७८ [मूल्य [illegible]]

Printed at The Belvedere Printing Works, Allahabad, By Sheel Mohan.

संतबानी पुस्तक-माला पर दो शब्द

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जगत-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी और उपदेश का जिनका लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उनमें से विशेष तो पहिले कहीं छपी ही नहीं थीं और जो छपी भी थीं सो प्रायः ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या क्षेपक और त्रुटि से भरी हुईं कि उन से पूरा लाभ नहीं उठाया जा सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्तलिखित दुर्लभ ग्रन्थ या फुटकल शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये। भरसक तो पूरे ग्रन्थ छापे गये हैं और फुटकल शब्दों की हालत में सर्वसाधारण के उपकारक पद चुन लिये हैं, प्रायः कोई पुस्तक बिना दो लिपियों का मुकाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई हैं, और कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत फुट नोट में दे
उनका जीवन चरित्र भी साथ ही में
किसी बानी में आये हैं उनके वृता

दो अन्तिम पुस्तकें इस पु
भाग २ (शब्द) छप चुकी हैं, जि
वैकुंठ बासी ने गद्गद होकर कहा

एक अनूठी और अद्वितीय
हितकारी" नाम की गद्य में सन्
नरेश ने लिखा है—"वह उपकारी

पाठक महाशयों की सेव
आवें उन्हें हमको कृपा करके लि

अखरावती

(कबीर साहेब)

॥ दोहा ॥

सतगुरु की परतीत, सत्तनाम निज सार है।
सोई मुक्ति सँदेस, सुनो साध सत भाव से ॥

॥ सोरठा ॥

नाम सनेही होय, काग कुमति गति परिहरै।
कलह करम सब खोय, हंस होय सतगुरु मिलै ॥

॥ चौपाई १ ॥

त्तलोक की अकह कहानी। सोइ निज सतगुरु की सहदानी ॥
ूप बरन जहँ वहँ नहिं देसा। तीन लोक अचरज सा देखा ॥
नहिं वहँ पाँच तत्त की काया। सत्तपुरुष आपहि निर्माया ॥
नहिं परकिर्ति पचीसो होई। जरा मरन जाने नहिं कोई ॥
दस इंद्री नाहीं षट कर्मा। बरन भेद नाहीं कुल धर्म्मा ॥
दिवस न रैन चंद्र नहिं सूरा। बिमल प्रकास सकल बिधि पूरा ॥
स्वर्ग नर्क गुन तीन न होई। सब्द सरूप सकल है सोई ॥

॥ दोहा ॥

सब्द सरूप सतगुरु अहैं, जाका आदि न अंत।
काया माहीं अग्र हैं, निहचे मानो संत ॥

॥ सोरठा ॥

सत्त सब्द परमान, अनहद बानी जो रहै।
और झूठ सब ज्ञान, कहैं कबीर बिचारि के ॥

॥ चौपाई २ ॥

सुनहु संदेसा सुरत सनेही। कहूँ संदेसा अचल बिदेही ॥
जुग अनंत हम आन पुकारा। कोई न माना बचन हमारा ॥
[illegible] त्रेता द्वापर बीता। काहु न हुई सब्द परतीता ॥
जप [illegible] जोग पवन ठहराया। काहू न खोज सब्द का पाया ॥

कलजुग एको थिति ना होई । बिन सतनाम तरै नहिं कोई ॥
जोनी संकट कबहुँ न छूटै । पकरि पकरि जम सबहिन लूटै ॥
तीरथ बरत नेम जग लागा । काहू के मन धोख न भागा ॥

॥ दोहा ॥

धोखे सब जग पचि मुत्रा, नहिं पाया थिति ज्ञान ।
सतगुरु सब्द पुकारही, बहिरा सुनै न कान ॥

॥ सोरठा ॥

बिन सतगुरु उपदेस, सुर नर मुनि नहिं निस्तरे ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस, और सबन की कौन गति ॥

॥ चौपाई ३ ॥

भरमि भरमि मूत्रा संसारा । बिरले काहू तंतु बिचारा ॥
या जग में बहु गुरुवा भयेऊ । स्वर्ग आसा नरकहि गयेऊ ॥
सबै सियान कृतिम मन दीन्हा । औगुन तें नहिं साहेब चीन्हा ॥
जो कहते जिव भौजल पारा । एको जिव उन नाहिं उबारा ॥
बूड़ि मरे ते भौजल माहीं । आतम ज्ञान बिचारे नाहीं ॥
राम कहत मूत्रा संसारा । आतम राम न काहू बिचारा ॥
सूझै सो जे त्रिभुवन सूझै । गहिरी बानी बिरला बूझै ॥

॥ दोहा ॥

कोटिक पढ़ गुन पचि मुत्रा, कहै कबीर समझाय ।
बिन सतगुरु पावै नहीं, कोटिक करै उपाय ॥

॥ सोरठा ॥

कर भक्ति छाँड़ि कुल लाज, जो सतगुरु उपदेस दिय ।
होय जीव को काज, निहचे कर परतीत कर ॥

॥ चौपाई ४ ॥

बहुत गिरंथ कथा पद साखी । जीवन काज अखरावति भाखी ॥
अगम निगम दोउ सब्द समोधा । एक सब्द तें जीव प्रबोधा ॥
सब्द रूप होय सब्द सनेही । सत्तनाम की महिमा येही ॥
बिन सतनाम न संसै जाई । संसै मिटे बिन नाहिं समाई ॥

सब जग तजि जो होय नियारा । सोई पावे सब्द हमारा ॥
सब्द गहै तज जग की आसा । निहचे कै मानो धर्मदासा ॥
निजपुर जाय बहुरि नहिं आवै । मन बच कर्म जो नाम धियावै ॥

॥ दोहा ॥

अछै बृछ की छाँह में, जो सतनाम समाय ।
सत्त सब्द परमान है, सत्तलोक को जाय ॥

॥ सोरठा ॥

कहैं हंसपति सोइ, हंसराज धर्मदास सुन ।
जीव काज जेहि होइ, सोई देहुँ सिखापना ॥

॥ चौपाई ५ ॥

काया तें आगे जो होई । ता में राखो सुरति समोई ॥
मूल अछर का नाम जो अहई । ता को बूझे जग नहिं बहई ॥
सब्द लागि जो मूल है गहिया । मूलहिं तें पावै निरमैया ॥
अच्छर साँच झूठ सब ज्ञाना । सोई अच्छर मूल बखाना ॥
सतगुरु दया तें अच्छर पाई । अच्छर तें हंसा घर जाई ॥
अच्छर मूल सबन को होई । बिन अच्छर सब जायँ बिगोई ॥
आदि अंत जिन अच्छर चीन्हा । तिन सतलोक पयाना कीन्हा ॥

॥ दोहा ॥

आदि अछर ही अगम है, ता को सब बिस्तार ।
सतगुरु दया तें पाइये, सत्तनाम निज सार ॥

॥ सोरठा ॥

करै बिचार बिबेक, कहूँ जीव निस्तार जेहि ॥
सत्तनाम की टेक, और सकल धन धाम है ॥

॥ चौपाई ६ ॥

षट कर्म तजु हे जीव अजानी । सुनो सब्द सतगुरु मुख बानी ॥
अजपा जाप जपो मन लाई । जाके जपे मिटे दुचिताई ॥
सब्द सार चीन्हो नर लोई । सब घट व्याप रहा है सोई ॥
चीन्हे ताहि जीव निस्तरि है । जिन रसना सो सब्द उचरि है ॥

है जोगी जोगी होइ अइया । (सो) मरे नाहिं जो तन मन बहिया ॥
मन्सा पवन जो निसदिन ध्याना । बानी केवल चित बिसराना ॥
धन सेवक जो अवसर पड़े । ठाकुर हो के सेवा करे ॥

॥ दोहा ॥

तिमिर मलिन तें ना टरे, (जौ लौं) सूर उदय नहिं होय ।
सत्त सब्द जो जानई, करम भरम सब खोय ॥

॥ सोरठा ॥

काहु को करै समीप, करम बृच्छ सत भाव है ॥
गहै सब्द निज दीप, जोग ठीक भेदा मिलै ॥

॥ चौपाई ७ ॥

गुरु गम गहै ज्ञान जो पावै । आवागवन की सुधि बिसरावै ॥
ज्ञान होय जो सतगुरु भेटैं । सतगुरु मिलैं तो संसा मेटैं ॥
गुरु प्रताप तें सब कुछ बूझै । गुरु की दया तें त्रिभुवन सूझै ॥
षट दरसन जो गये भुलाई । बिन गुरु घाट न काहू पाई ॥
सतगुरु मिलैं तो घाट बतावैं । औघट तें घाटे ले आवैं ॥
देही का गुरु सबहिन कीन्हा । सतगुरु रूप न काहू चीन्हा ॥
करम हेत देही गुर करई । मन का धोख न उनसे टरई ॥

॥ दोहा ॥

तन की आस सब छूटई, मन का करै बिचार ।
मन चीन्हे बिन थित नहीं । सतगुरु कहैं पुकार ॥

॥ सोरठा ॥

सतगुरु खोजो संत, जीव काज जेहि होय जो ।
मेटैं भव का अंत, आवागवन निवारहीं ॥

॥ चौपाई ८ ॥

घट परमान है सब के माहीं । है घट में घट की सुधि नाहीं ॥
निकट रहै नहिं करै बिचारा । मृग कस्तूरी ढूंढ़ै बन झाड़ा ॥
जनम अनेकन गये निरासी । थित पावै नहिं मिटै चौरासी ॥

किरतम को सबहिन सत माना । सत्त सब्द का मरम न जाना ॥
जब लग सार सब्द नहिं बुझई । चौरासी कैसे के तजई ॥
सतगुरु मिलैं तो संसा जाई । बिन सतगुरु नहिं करम नसाई ॥
काल फाँस सत सब्द से कटई । निस बासर जो नामै रटई ॥

॥ दोहा ॥

जंत्र मंत्र सब झूठ है, मत भरमो जग कोय ।
सत्त सब्द जाने बिना, कौवा हंस न होय ॥

॥ सोरठा ॥

पतिबर्ता नहिं सोय, जो पति तजि औरहि रतै ॥
वाका नीक न होय, दूजा पति जो पै लखै ॥

॥ चौपाई ६ ॥

निहचे कर जो सतगुरु भाखा, मूलहि गहे तेजि सब साखा ॥
नाम गहै तज जग की आसा । नाम बिना जग गया निरासा ॥
देह धरे का सुख है येही । सतगुरु मिलि होइ नाम सनेही ॥
करम भरम तजि कुल से टूटै । चौरासी का बन्धन छूटै ॥
नाम बिना नर सब कोइ पचिया । काल के मुख से कोइ नहिं बचिया ।
नाम समान न जग कछु होई । सब्द में ब्याप रहा है सोई ॥
नाम सनेही जग से न्यारा । जस जल माहिं कँवल निरधारा ॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु का उपदेस है, जो सतनाम समाय ।
सत्त सब्द छूटै नहीं, निहचे निज घर जाय ॥

॥ सोरठा ॥

बिनवों दोउ कर जोर, साहेब बंदीछोर को ।
पावों नाम की डोर, जरा मरन भव का मिटै ॥

॥ चौपाई १० ॥

सतगुरु सब्द खेल चौगाना । यह ना गोय रहै मैदाना ॥
सुरत निरत दोउ हाल बनाई । तेहि का गोय गगन पहुँचाई ॥
चीन्है सब्द सब्द सब जानै । दूजा भाव न मन में आनै ॥

तुचा सहित जो अनहद राता । और सभी झूठी है बाता ॥
नाम भेद संसा मिटि जाई । अनुभव पद में जाय समाई ॥
उधरै सब्द बिबेकी होई । सब्द बिना जग जाय बिगोई ॥
बिना सब्द मुक्ती नहिं पावै । ज्ञानी होय सो यह अर्था वै ॥

॥ दोहा ॥

पंडित पढ़ गुन पचि मुए, बिन गुरु मिलै न ज्ञान ।
बिना सब्द नहिं मुक्ति है, सत्त सब्द परमान ॥

॥ सोरठा ॥

ज्ञानी सुनहु संदेस, तीन लोक के बाहरे ।
तहाँ मुक्ति परवेस, सब्द बिबेकी परखिहै ॥

॥ चौपाई ११ ॥

अच्छर निःअच्छर सतनामा । अच्छर साँच झूठ सब जाना ॥
पंडित होइ अच्छर नहिं चीन्हा । सो पंडित है काल अधीना ॥
पंडित सो जिन अच्छर चीन्हा । अच्छर सभी घाट परबीना ॥
अच्छर मूल और सब जाई । बिन अच्छर नहिं मन पतियाई ॥
इक अच्छर का नाम जो पावै । जोनी संकठ बहुरि न आवै ॥
अच्छर होय जो अच्छर जानै । अछै लोक का भेद बखानै ॥
अछै बृच्छ अच्छर तें पावै । सब्द डोर हंसा चढ़ि आवै ॥

॥ दोहा ॥

अछै होय अच्छर गहै, अच्छर ही उपदेस ।
अछर डोर चढ़ जाय जिव, अच्छर जाके देस ॥

॥ सोरठा ॥

अच्छर ही परमान, सतगुरु कहैं पुकार के ।
पावै मुक्ति कर दान, सत्त बचन परमान है ॥

॥ चौपाई ४ ॥

जीव काज होवै सोइ लागी । सोई करो कुल लज्जा त्यागी ॥
सुर नर मुनि गन सब पचि हारे । काहू सब्द भेद न बिचारे ॥
ये संसय संसारहि पड़िया । तब सब जीवन को स्रुत कहिया ॥

कौन होय तो भेद बतावै। कहैं सतगुरु जो नाम सुनाव ॥
हंस होय तो निज घर जाई। चौरासी नाहीं भरमाई ॥
तब सतगुरु मिलि कीन्ह बिचारा। जीव काज लख ज्ञान पुकारा ॥
सत्त नाम था का परमाना। जो पावै सो देय पयाना ॥

॥ दोहा ॥

सत्त सब्द निज जानि के, जिनके मन परतीत ॥
काग कुमति तजि है सभी, चलै सो भव जल जीत ॥

॥ सोरठा ॥

क्यों छूटै जम जाल, पाँव बंध जो बंधिया।
काटैं दीनदयाल, करम फंद इक नाम तें ॥

॥ चौपाई १३ ॥

झनकारै अनहद है जहवाँ। सुरति सनेही पहुँचे तहवाँ ॥
और और कछु सुनै न भावै। उनमुनि सर्द अमीरस चाखै ॥
मन थिर होय न एको बाता। तौ पतियाय जो अनहद राता ॥
जहँ लग जग में बाजे होई। अनहद माहिं सुने सब कोई ॥
सुरति से देखे निरत अखाड़ा। सतगुरु मता यही है सारा ॥
वाही घर जो सुरत लगावै। सो घर सतगुरु अजर दिखावै ॥
ज्ञानी होय कोइ सुरति सनेही। भेद बखानै अवचल देही ॥

॥ दोहा ॥

बंधन तें न्यारा रहै, बिरला पावै भेद।
काहे को जप, तप करै, पढ़ै सास्त्र और बेद ॥

॥ सोरठा ॥

मन तब गगन समाय, धुन सुन कर जो मगन होय।
नहिं आवै नहिं जाय, सुन्नी सब्द थिति पावई ॥

॥ चौपाई १४ ॥

जो कोइ जग से न्यारा होई। सात दीप को जानै सोई ॥
रेचक पूरक कोइ कोइ जानै। कुंभक बिरला भेद बखानै ॥
इंगल पिंगल का करे बिबेका। सुखमन तत्त न काहू देखा ॥

मन पवना निसि दिन भरमावा । बाहर भीतर थिति नहिं पावा ॥
करम अनेक जोग जो करई । जुगत बिना नर नरकै परई ॥
सहज जोग जिन सब्द पैया । सहजहि से मन गगन चढ़ैया ॥
सो जोगी जो मन को चीन्हा । मन चीन्हे बिन जोग अधीना ॥

॥ दोहा ॥

सब्द खोजि मन बस करे, सहज जोग है येह ॥
सत्तनाम निज सार है, नहिं तो झूठी देह ॥

॥ सोरठा ॥

सत माने नर सोय, सतगुरु जो दाया करैं ।
और झूठ सब होय, काहे को भरमत फिरै ॥

॥ चौपाई १५ ॥

झूठा होइ कस नामहि लागी । मन बच कर्म होय बैरागी ॥
कुल छूटै तब सतगुरु भेटैं । जो उपजै सो संसा मेटैं ॥
नाव अहै पर खेवट नाहीं । भवजल जीव कहाँ होइ जाहीं ॥
भवसागर बहु संकट होई । बिना नाम डूबै सब कोई ॥
सत्त नाम भवतारन येही । जेहि जानि जिव निर्भय रहही ॥
नाम अहै साथी कढ़िहारा । सतगुरु खेय लगावैं पारा ॥
नाम गहे जग जुगति बहावै । मिथ्या जग जो नामहि पावै ॥

॥ दोहा ॥

एक नाम जाने बिना, नहिं मिटे करम का अंक ।
तबही से सच पाइये, जब होय जीव निसंक ॥

॥ सोरठा ॥

आपा डारै खोय, वह प्रानी रंगे मिलै ।
तबही तें सुख होय, जाति बरन जाके नहीं ॥

॥ चौपाई १६ ॥

जो दृढ़ कै सत नामहि जानै । सतगुरु बचन सत्त कर मानै ॥
सतगुरु कहैं सोई यह करई । सतगुरु आज्ञा से निस्तरई ॥
सत्त बचन सतगुरु को भाखे । सतगुरु तें राखै अभिलाखे ॥

निस बासर सतगुरु लौ लावा । सतगुरु दया से नामहि पावा ॥
जाको मिलै सब्द सहदानी । तिन सतगुरु की महिमा जानी ॥
जाको सतगुरु की परतीती । निर्भय होय सो भवजल जीती ॥
प्रेमहि से सतगुरु जिन पावा । भवजल में सतलोक दिखावा ॥

॥ दोहा ॥

मूल ध्यान गुरु रूप है, मूल पूजा गरु पाँव ।
मूल नाम गुरु बचन है, सत्त मूल सत भाव ॥

॥ सोरठा ॥

निर्गुन निस दिन गाव, रटै दास जिव जाहि को ।
गुरु विद्या बतलाव, गोबिन्द गुरु बिन ना मिलै ॥

॥ चौपाई १७ ॥

जेहि डारी घर में बैठाई । तेहि पर बैठि जुगन जुग भाई ॥
तेहि डर तीनों लोक डेराई । जरा मरन चौरासी भाई ॥
पंडित पढ़ि पढ़ि बेद बखानी । गुन तीनों की अस्तुत जानी ॥
वही चाल संसार चलावै । करम भरम भवफंद दृढ़ावै ॥
सरगुन में संसार भुलाना । निर्गुन का कोई भेद न जाना ॥
अर्थ बिचारे पढ़ि पढ़ि गीता । भई नहीं सतगुरु परतीता ॥
देह धरी सतनाम न गाया । कैसे तेहि छाड़ै जमराया ॥

॥ दोहा ॥

सत्तनाम लौ लावही, गहै संत की ओट ।
सतगुरु की परतीत कर, हंस जाय सतलोक ॥

॥ सोरठा ॥

सतगुरु बिन नहिं काज, जीव कहाँ होइ बाचई ।
काल तीन पुर राज, नाम बिना कैसे बचै ॥

॥ चौपाई १८ ॥

टूटि जाय यह मंदिर काँचा । तौ यह जीव कहाँ होइ बाचा ॥
सब्द से परिचै नाहीं करई । कैसे जिव भवसागर तरई ॥
बहुतक मंदिर खोज जो कीन्हा । येही सब्द साध नहिं चीन्हा ॥

सब्द बिदेह न कोई बिबेकी । रूप बरन को सब कोई देखी ॥
ताहि सार को आप जो करई । तब सतलोक पयाना धरई ॥
जिन नहिं तन मन सब्द समोई । तिन सब जनम अकारथ खोई ॥
सब्द रतन को दृष्टि जो होई । तब अदृष्ट को देखै सोई ॥

॥ दोहा ॥

सब्द सार जानै जोई, जिव बिरले तरि जाय ।
काया माया थित नहीं, सब्द लेव अर्थाय ॥

॥ सोरठा ॥

सब्द काया में सार, और सकल बेसार है ।
ज्ञानी करो बिचार, सतगुरु ही से पाइये ॥

॥ चौपाई १९ ॥

नहिं आसा यह जिवरा केरी । पावै नाम तो काटै बेरी ॥
जो कोई जीव मुक्ति को चाहै । सो अज्ञा सतगुरु निबाहै ॥
सुर नर भरमि मुए जग माहीं । जब तप गर्ब न नाम समाई ॥
ऐसेहि भरम मुआ जग सारा । काहु न सतगुरु मर्म बिचारा ॥
ज्ञानी बहुत देव आराधे । कर्म करे और इन्द्री साधें ॥
दीन्हो फंदा जम ही ऐसे । ओहि भवसागर छूटै कैसे ॥
मत कोइ भटक मरो एहि बाटा । धरनि अकास माहिं जेहि घाटा ॥

॥ दोहा ॥

कर्म फंद जिव फंदिया, जप तप पूजा दान ।
जेहि बस्तू जिव काज होय, सो नहिं परी पिछान ॥

॥ सोरठा ॥

तरै जो नाम समाय, बिना थीर जिव बूड़िया ।
सब्दहि कहा दृढ़ाय, सतगुरु के सतभाव से ॥

॥ चौपाई २० ॥

तत्व सार जाने नर कोई । किरतम में जग गया बिगोई ॥
निसदिन सतगुरु सब्द पुकारै । पंडित सतगुरु नाहिं बिचारै ॥
झूठ धोख सबहिन पतियाई । सत्त सब्द हिरदे न समाई ॥

जग में बाजी काल पसारी। जग में भ्रम बाजी बिस्तारी ॥
सारदा चंडी माया चित लाई। बिन चकमे जग पशु भुलाई ॥
बाजी तभी दृष्टि में आई। सतगुरु तंतु सार बतलाई ॥
सुमिरन सार यही तत सारा। और सबै पाखंड ब्योहारा ॥

॥ दोहा ॥

सतजुग त्रेता द्वापर, और कलिजुग परमान।
तत्तसार सतनाम है, और झूठ सब ज्ञान ॥

॥ सोरठा ॥

बूझहु तत्त बिलोइ, सतगुरु सीख हृदय धरो।
तत दरसी सोइ होय, तंतु सार बीचारिये ॥

॥ चौपाई २१ ॥

थीत होय जो सतगुरु भाषा। और सबै छूटै अभिलाषा ॥
थित पावे भाजन थिर होई। बिन थिति सो नर गये बिगोई ॥
काहू न खोज किया थित केरा। जिव चौरासी होय बसेरा ॥
जप तप तीरथ बर्त भुलाना। काहू थित का मर्म न जाना ॥
सब जग धोखे को पतियाई। कौतक का सुपना होइ जाई ॥
सब जग विष्नू को थित राखा। विष्नुहि को निज सतगुरु भाषा ॥
पंडित बेद पढ़ी पढ़ि मरहीं। बुधि ठगाय थित खोज न करहीं ॥

॥ दोहा ॥

थीर सब्द माने नहीं, सब ही ग्रासे काल।
भर्म तजे जेहि थिर मिले, तब छूटे जम जाल ॥

॥ सोरठा ॥

जग गयो सागर माहिं, कहो कैसे कै निस्तरै।
गहु सतगुरु की बाँह, बेगहि पार उतारहीं ॥

॥ चौपाई २२ ॥

दरपन माँजे निसिदिन जैसे। रूप अरु रेख रहे नहिं ऐसे ॥
सब्द भजे जन निरमल होई। जो पल पल में सब्द बिलोई ॥
सब्द सरूप सदा कनिहारा[1]। पल पल निस दिन ज्ञान मंझारा ॥

(१) माँझी।

माँजत रहे न लागे काई। दरसन देखे मन पतियाई ॥
जो न होत दरसन का भेऊ। तो ये दरपन को पतियेऊ ॥
दरपन है दरसन को साजा। पंच तत्त सब को उपराजा ॥
निरखि परखि दरपन को राखा। सब्द बिचारि के दरसन दाखा[1] ॥
बिन दरपन दरसे नहिं रूपा। धरमनि यह गुरुगम्म अनूपा ॥

॥ दोहा ॥

सत्त सब्द निज सार है, नहिं तो झूठी देह।
दरपन देखे माँज के, दरसन लीयो येह ॥

॥ सोरठा ॥

सत्त सरूपी भाव, सब्द सरूप बसे जहाँ।
सत्त नाम नहिं पाव, बिमल दरस देखे बिना ॥

॥ चौपाई २३ ॥

ज्ञानी कोई ध्यान लगावै। तन बिचार मन तारी लावै ॥
सब्द सुरति करि स्वामी मेलै। माहीं पैठि गगन में खेलै ॥
ज्ञानी कोइ मन सुरति चढ़ावै। सुरति बाँधि ऊँचे को लावै ॥
निसि दिन राखै तंतु बिचारा। सतगुरु आवागवन निवारा ॥
बाहर भीतर लौ जो राखै। अगम निगम का भेद सो भाखै ॥
देह धरे जाको लौ लावै। तन त्यागे तब तहाँ सिधावै ॥
ज्ञानी जुगति से जोग धराई। सो जोगी भौ सिंधु तिराई ॥

॥ दोहा ॥

सब्द खोज निज सब्द होइ, एकहि यह निस्तार।
सतगुरु सब्द पुकारही, करनी करै सो सार ॥

॥ सोरठा ॥

सब्द गहो गुरु ज्ञान, मूल ध्यान सतगुरु कहै।
सोई संत सुजान, सब्द बिबेकी होय जो ॥

॥ चौपाई २४ ॥

जिव निस्तार निज नाम से होई। बिना नाम बाचै नहिं कोई ॥

---

(१) देखा, ताका।

सुर नर मुनि षट कर्म भुलाना । होइ निःकर्म नहिं नाम समाना ॥
फिर फिर कर्म बंधन सब होई । नाम बिना नहिं बाचै कोई ॥
ऐसे बहुते भये उदासी । नाम बिना न छुटे चौरासी ॥
नाम बिना जिव जम ले जाई । नाम बिना नहिं कर्म कटाई ॥
नाम बिना बहु देह धराई । जोनी संकट फिर फिर आई ॥
सबहि पचे धन धामहि लागी । बिरला भया नाम अनुरागी ॥

॥ दोहा ॥

कोई न जम से बंचिया, बिना नाम धर खाय ।
जे जन बिरले नाम के, ता को देख डेराय ॥

॥ सोरठा ॥

तब मिटै करम को अंक, सत्त नाम को पाइहैं ।
जीव होय निःसंक, सत्त बचन सतगुरु कहैं ॥

॥ चौपाई २५ ॥

प्रानी नाम का पावै बीरा । होय हंस तजि काग सरीरा ॥
तब ही मिटै करम को अंका । जो सत नाम गहे निःसंका ॥
जीव प्रतीत करै परवाना । नाहीं तो होइ नरक निदाना ॥
सतगुरु मिलैं दयानिधि पावै । निज घर जाय बहुरि नहिं आवै ॥
जेहि देखि जम करै सलामा । निज परवाना मुहर सतनामा ॥
घाट बाट जम रोकै नाहीं । मुहर देखि सिक्का जो त्राहीं[1] ॥
बिन परवाना नहिं निस्तारा । जो पावै सो उतरै पारा ॥

॥ दोहा ॥

नर नारी और बालका, सबही को परवान ।
निज सतलोकहि जाइहैं, बोले संत सुजान ॥

॥ सोरठा ॥

जहाँ छाँह नहिं धूप, तहाँ जो सब्द सरूप है ।
देखै बिमल सरूप, जनम सुफल करि मानइ ॥

(1) डरते हैं ।

॥ चौपाई २६ ॥

पार उतरना जो कोई चाहै। सो खेवट से प्रीत निबाहै ॥
भवसागर भव संकट होई। पार सार नहिं बूझै कोई ॥
सूझै जो नहिं अगम पसारा। होय पार खेवट करे सारा ॥
खेवट महिमा जाने कोई। तीन लोक खेवट को होई ॥
पारब्रह्म जो कहिये ऐसा। जाके आगे सतगुरु देसा ॥
जम को जहाँ नहीं परवेसा। आदि पुरुष कै जहवाँ देसा ॥
जहँ सोइ जाय और सो होई। जरा मरन से बाचे सोई ॥
तीन लोक को वेद बखाने। चौथे उनमुन भेद न जाने ॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु निज सत भाव से, ऐसा भेद बताय।
धन्य सिष्य कर लाय नेह, जो अस छापा पाय ॥

॥ सोरठा ॥

बिन बैराग निस्तार, कहो कैसे भौजल तरै।
ता को करहु बिचार, सतगुरु मिलै तो पाइये ॥

॥ चौपाई २७ ॥

फंदा जम का कैसे कटे। निसि बासर जो नाम न रटे ॥
यह घाटी है जम की फाँसी। सुर नर मुनि फंदे चौरासी ॥
तीन लोक जम जाल पसारा। ता में उरझि रहा संसारा ॥
जनम जनम है जम को त्रासा। मृत्यु लोक पाताल अकासा ॥
सत्त सब्द परतीत न कोई। ऐसे सब जग गया बिगोई ॥
चौथे लोक का तब सुख पावै। जब सतगुरु सत सब्द बतावै ॥
मन बच कर्म जो नामहि लागै। जनम मरन छूटै भ्रम भागै ॥

॥ दोहा ॥

कर्म करै देही धरै, फेर फेर पछिताय।
बिना नाम बंचै नहीं, जीवहि जम लै जाय ॥

॥ सोरठा ॥

गाढ़ो जम को फंद, जेहि फंदे जिव फंदिया।
कटै तो होय अनंद, सार नाम सतगुरु दिया ॥

॥ चौपाई २८ ॥

बानी जो गहिरानी बोलै। गहिरा होय सो उनमुनि खोलै ॥
इंगला पिंगला पै अंतस रहै। सुषमना तंतु जान के गहै ॥
जब लग कीट गति नहिं बिसरावै। तब लग कस भृंगी कहलावै ॥
त्रिकुटी मध्य सुरति संचरै। उनमुनि मद्धे पाँवहि धरै ॥
कूंची कर गहि खोल किवारा। अनहद नाद सून्य झनकारा ॥
सुनै जो गुरुमुख देखै नैना। तब पतियावै गुरु के बैना ॥
धुन के सुने आतमा जागै। अनुभै तारी सहजे लागै ॥

॥ दोहा ॥

अगम अगोचर पैठि के, देखै तत्व बिलोइ।
बानी जहँ निरबान है, समरथ साँचा सोइ ॥

॥ सोरठा ॥

जग में बहु परपंच, तामें जिव भूला सबै।
नहिं पावै कोइ संच, एक नाम जाने बिना ॥

॥ चौपाई २९ ॥

भौजल तबही उतरै पारा। जबहि मिलै सतगुरु कनिहारा ॥
बिन कनिहार न भौजल तरही। डूबहि फिर फिर देही धरही ॥
जो कोइ खोज लीन्ह कनिहारा। नाम जहाज चढ़ि उतरै पारा ॥
गुरु प्रताप से भौजल छाँड़ै। धुजा सुरति की सुन में गाड़ै ॥
अनहद के नीसान बजावै। हंसराज होइ संत कहावै ॥
सतगुरु मिलै सतनाम समावै। भौजल तजि सतलोकहि आवै ॥
भौजल का बिसरै सब साज। सुख सागर बिलसै सुख राज ॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु को बिस्वास कर, तजै लोक कुल लाज।
भौजल पार सो होइ जिव, चढ़ सत नाम जहाज ॥

॥ सोरठा ॥

भौजल अगम अपार, अति अथाह अंबुज अहै।
डूब सकल संसार, बिन परचे कनिहार सब ॥

॥ चौपाई ३० ॥

मन में किरति जो ऐसी होई। धरती रहै गगन में जोई ॥
जेहि खोजत सुर नर मुनि थाके। जाको खेल न जाने वाके ॥
ऐसे भये दसो औतारा। और बहु भाँति भया संसारा ॥
पल में दसा अनेकन होई। नहिं कितहूँ थिर गये समोई ॥
जाको अहै सकल बिस्तारा। नहिं कोइ ता का रूप निहारा ॥
पाँच तत्त दस इन्द्री संगा। उपजे बिनसे नाना रंगा ॥
तेहि धोखे जग रहा भुलाई। जब चीन्हे तब धोखा जाई ॥

॥ दोहा ॥

पाछे जन्महि को गहै, कागद को उच्चार।
उलटा है सूधा करै, तब दीखे संसार ॥

॥ सोरठा ॥

निज मन सतगुरु पास, जहाँ जाय सब सिधि मिलै।
जग ते होय उदास, तो को कोइ नहिं खोजिया ॥

॥ सोरठा ॥

सत्त सब्द परमान, अनहद बानी जो हहै।
और भूठ सब ज्ञान, सत्त सब्द सत सार है ॥

॥ चौपाई ३१ ॥

सत्त नाम आहे तत सारा, अगम निगम का कुंजी तारा ॥
ररंकार सब्द इक होई। ता में राखो सुरति समोई ॥
मूल नाम का करो बिबेका। ज्ञान चच्छु ते बिरले देखा ॥
जाकर कुंजी तारा होई। घट का भेद लखेगा सोई ॥
सतगुरु मिलें तो भेद बतावें। भौजल माहिं बहुर नहिं आवें ॥
सुनै जो ऐसा अगम संदेसा। निहचै छूटै जम का देसा ॥
चेला गुरु परतीत जो धरई। जम तेहि देख डंडवत करई ॥

॥ दोहा ॥

यह सतगुरु उपदेस है, जो मानै परतीत।
करम भरम सब त्यागि कै, चलै सो भौजल जीत ॥

॥ सोरठा ॥

गहै सब्द को मूल, बुंद सिंध में मिलि रहै ।
सब्द माहिं अस्थूल, बीज बृच्छ बिस्तार भो ॥

॥ चौपाई ३२ ॥

लख सोई अलक्ख जो होई । सब्द सुरत सम राख समोई ॥
सब्द सनेही राखै चीन्हा । निसि दिन रहै सब्द में लीना ॥
निर्गुन सर्गुन तासु पसारा । आप आपना रूप निहारा ॥
तेहि सब दृष्टि रहै अनुरागी । आस्रम माहिं होय बैरागी ॥
ऐसी सुरति रहै लौ लाई । निद्रा भूख सहज ही जाई ॥
पारब्रह्म की महिमा भाखै । बिषय तजै अमृत रस चाखै ॥
मन थक ब्रह्म होय जो वाके । देखै सुन्य मार्ग फिर ताके ॥

॥ दोहा ॥

पृथ्वी अप और तेज नहिं, नहीं वायु आकास ।
अललपच्छ तहँ होइ रहो, सत्त सब्द बिस्वास ॥

॥ चौपाई ३३ ॥

सो तहं हंस रावरा[1] होई । मानसरोवर पहुँचै सोई ॥
काया पलट होय आवर्ना । तब पावै सतगुरु की सैना ॥
देह दसा बिसरै जेहि केरी । काटै करम भरम को बेरी ॥
फिर देही नाहीं धर लेही । सुख बासा सुखसागर रहही ॥
हंसन के संग करै जहीरा । पाँच तत्त को रहै सरीरा ॥
बिमल होय हंसा की देही । सदा रहै जो सब्द सनेही ॥
मिटै बिदेस की आसा जबही । पहुँचै जाय देस में तबही ॥

॥ दोहा ॥

हंस होय सत जीव जो, करै देस की आस ।
जिन प्रतीत है सब्द की, करिहै सो सुख बास ॥

॥ सोरठा ॥

महिमा अगम अपार, ताहि अगोचर जानिये ।
सोई है तत सार, जो सतगुरू दया करै ॥

(१) हजूरी ।

॥ चौपाई ३४ ॥

ओंकार को सब जग जानी । ता ते पंडित बेद बखानी ॥
निराकार ते भया अकारा । या बिधि भौसागर बिस्तारा ॥
सूछम से जो भया अस्थूला । हिलमिल बिलसे ता को मूला ॥
सूछम कार जाहि निरमाया । आपहि सब का मूल कहाया ॥
ता मद्धे निःतत का बासा । बिमल सरूप सदा परकासा ॥
तीन लोक में रहा समोई । चौथे को जब पावै कोई ॥
पाँच तत्त गुन तीन जो राचा । देह लागि सुर नर मुनि नाचा ॥

॥ दोहा ॥

तिरबिधि ताप को काटही, चौथे आप कहाय ।
सत्त सब्द जाने बिना, सब जग रहा भुलाय ॥

॥ सोरठा ॥

मूल छाँड़ि गह डार, सुर नर मुनि जो रहे सब ।
भूल रहा संसार, तिरबिधि रूप पखंड में ॥

॥ चौपाई ३५ ॥

बिर्लै नाम कोई कोइ ध्यावै । जेहि ते आवागवन नसावै ॥
ममता ते जग को बिस्तारा । नाम गहे सो उतरे पारा ॥
काहे पंडित विद्या पढ़ई । सतगुरु के सत पंथ न चलई ॥
बेद कतेब धरे इक ओरा । तन मन अर्पे नाम निहोरा ॥
पटतर नाम न जग कछु अहई । भ्रिङ्गी जीव जो नाम छंटैई ॥
नाम बिना जिव परलै होई । सुर नर मुनि सब गये बिगोई ॥
नाम एक सार जग माहीं । नाम बिहूना आवै जाही ॥

॥ दोहा ॥

नाम भजै धन धाम तजि, नर नारी सब कोय ।
अवचल महिमा जेहि बसै, तो अवचल देही होय ॥

॥ सोरठा ॥

सत्तनाम बिस्वास, करम भरम जग परिहरै ॥
सतगुरु पुरवै आस, जो नर आस ऐसी करै ॥

। चौपाई ३६ ।।

मूलहि कोइ न लागे आई। फेर फेर जग परलै जाई ॥
देह धरे बहु कर्म कमाई। कैसे आवन गवन नसाई ॥
तीरथ बग्त नेम आचारा। येही में भूला संसारा ॥
पूजि पषान नहिं आतम जाना। तन छूटे पाषान समाना ॥
मंत्र जंत्र सीखे ओछाई। नाटक चेटक सक्ति दिखाई ॥
बाजी में संसार भुलाना। सतगुरु मिले न नाम समाना ॥

॥ दोहा ॥

बिबिध रूप की भक्ति में, फिरि फिरि धरै सरीर।
एक नाम बिन मुक्ति नहिं, ऐसी कहैं कबीर ॥

॥ सोरठा ॥

परलय जनम अनेक, करम करै सुख दुख सहै।
नहिं पावै कोइ एक, जेहि मिले जिव काज होय ॥

॥ चौपाई ३७ ॥

सत्तनाम इक अच्छर सोहै। जाके बूझे जिव निर्मोहै।
अच्छर में निःअच्छर होई। ज्ञानी होय सो बूझै कोई ॥
पंडित अच्छर बेद बखानै। निःअच्छर का मरम न जानै ॥
निःअच्छर है नाम की डोरी। जेहि मिले जिव फंदा तोरी ॥
बिन रसना गुन गावै कोई। सुरत सब्द धर जानै सोई ॥
कथा होय तो कहूँ सुनाई। अकथ कथा कस जाय बताई ॥
ज्ञानी होय सो ज्ञान बिबेकी। अच्छर भेदी निःअच्छर देखी ॥

॥ दोहा ॥

कहत बिकल सब कोय, मूल मरम ना पावई।
अकथ कथा सतगुरु कही, सुन्नी सुन जो चावई ॥

॥ सोरठा ॥

अथाह अमूल जो बेद, पार लोक बिस्तार जेहि।
सतगुरु कहैं सो भेद, बीज वस्तु पहिचानई ॥

॥ चौपाई ३८ ॥

सहज रूप धुन होत सदाई। सत्त सुक्रित को आसन जहँई ॥

अगम चढ़े जो चीन्हे कोई । धरती सुरति सो गगन समोई ॥
तारी दसवें द्वारे लागी । गुरु प्रताप से आतम जागी ॥
तन मन की गति मति बिसरावै । सरतवंत कोइ सहज समावै ॥
धरती तजि जब चढ़ै अकासा । देखै झिलमिल बिमल तमासा ॥
उर्ध रूप जाय निज अहई । गगन के मध्य मगन होइ रहई ॥
बज्र किवाड़ी लेहि उघारी । थाके मन जब बाज[1] बिचारी ॥

॥ दोहा ॥

सहज सुन्न के आगे, तीन लोक के पार ।
जहाँ निसान बजावही, सब्दन की झनकार ॥

॥ सोरठा ॥

सुनै जो अगम संदेस, निगम थके गुन गाय के ।
छूटे सब भ्रम भेस, निहचै जाय प्रमान कर ॥

॥ चौपाई ३९ ॥

अच्छर है निज सार अरूपा । जा ते सब जग धरा सरूपा ॥
लौ लावै छिन नहिं बिसरावै । आदि अंत की मद्धै पावै ॥
मूल मंत्र यह सतगुरु बोला । कुंजी कुफल ते कुंडी खोला ॥
मूल अहै जो सब में धरिया । अनहद बानी अनुभव कहिया ॥
मूल सब्द जो बोले बानी । आदि अंत की मध सहदानी ॥
मूल मंत्र सोई लख पावै । जाको सतगुरु सुरति लगावै ॥
सुरति सनेही सभी बिचारा । सतगुरु ऊपर चढ़े पुकारा ॥

॥ दोहा ॥

सुरति सनेही है कोई, करै बिबेक बिचार ।
चीनी चुने पपील ज्यों, चीनी रेत मंझार ॥

॥ सोरठा ॥

मूल मंत्र सब माहिं, बानी से उजियार भव ।
तहाँ धूप नहिं छाँह, निगम जो नेत पुकारही ॥

॥ चौपाई ४० ॥

यही जगत है जम को देसा । नाम भजे तब मिटै कलेसा ॥

---

(१) छोड़े ।

ग को डार लेय परवाना । सतगुरु सहज अमी रस आना ॥
ाते बिष नहिं व्यापि सरीरा । अमृत पियै तजै बिष नीरा ॥
ग में काल जो जाल पसारा । तीरथ बरत को करि बिस्तारा ॥
ोई न सत्त नाम बिन बाचे । नेम अचार काम में राचे ॥
बही उरझे भूत परेता । बिन चेते जग हुआ अचेता ॥
कल देह जोनि लिपटाई । कैसे मन का धोखा जाई ॥

॥ दोहा ॥

सत्तनाम निर्आस पद, सत्तलोक को जाय ।
झूठ आस संसार की, जेहि लागो जिव धाय ॥

॥ सोरठा ॥

करम काल बस जीव, भर्मे जो जिव पचि मरे ।
नाम अमी रस पींव, काहे को बिष सींचही ॥

॥ चौपाई ४१ ॥

नमुन ते जो सब रस चाखा । मन पवना जो अंतर राखा ॥
ाया में पाताल अकासा । निःअच्छर मजहर है देसा ॥
ापा मेटि के तारी लावै । चंद्र स्थान में सूर उगावै ॥
ंध कूप दामिनि परकासे । अगम पंथ जेहि कीन्ह गुफा से ॥
ाँजी द्वार अजर जहँ झाँका । वहँ होइ बाट चले सो ताका ॥
गन मंडल में आसन माँड़े । उलट चोर कोतवाले डाँड़े ॥
ंडप चहुँ दिस एकहि बेरा । मिटि गई भौजल जीवन केरा ॥

॥ दोहा ॥

रैन दिवस इक सम करै, तिमिर न होय प्रकास ।
आदि ब्रह्म ते दीखई, पूजै मन की आस ॥

॥ सोरठा ॥

सतगुरु के परसाद, सहज समाध लगाइये ।
रीझि रहा मन नाद, देखि भेद सब जानिये ॥

॥ चौपाई ४२ ॥

कहि है जग ब्रह्म निनारा । निज घट घट का खेल पसारा ॥

सब्द एक औार एकहि रूपा । सेत से उपजा लाल सरू
एक देख तब मन पतियाई । एकहि में मन रहा सम
एकहि से जग भया अनंता । सतगुरु भेद बतावें सं
वही वहाँ लै घर पहुँचावैं । जग अनंत में एक कहा
एकहि टेक करै जिव आसा । मन बच क्रम सतगुरु बिस्वा

॥ दोहा ॥

एक रूप इक बर्न है, एकहि है सब भेष ।
दुबिधा भरम बिसारिये, ऐसा अगम संदेस ॥

॥ सोरठा ॥

सत्तनाम है एक, जो सतगुरु सत भाखिया ।
करहु एक की टेक, मुक्ति नहीं परतीत बिनु ॥

॥ चौपाई ४३ ॥

वा का ज्ञान अखरावति सारा । बावन अच्छर का बिस्ता
नौ उपदेस भेद अस भाखा । नेति नेति से ऊपर रा
इक इक अच्छर की सहदानी । बेद का मूल कथा कहो बा
सत्त लोक का अगम संदेसा । सो सतगुरु जीवन उपदे
अकथ कथा अखरावति भाखी । बेद कतेब देहिं सब सा
अखरावति पढ़ि भेद बखाने । सतगुरु की महिमा सो जा
आदि अंत निज अच्छर बूझै । अच्छर माहिं निअच्छर सू

॥ दोहा ॥

बिन अच्छर सब झूठ है, अच्छर सब में सार ।
अच्छर भेद जो पावई, सोई हंस हमार ॥

॥ सोरठा ॥

कहै कबीर उर माहिं, सत्तलोक परतीत कर ।
हंसराज की छाँहिं, सो निहचै भौजल तरै ॥

॥ दोहा ॥

सीस गुरू को अरपि के, कीजै तत्व बिचार ।
सतगुरु दया से मुक्ति फल, उतरै भौजल पार ॥

॥ इति ॥